National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 1; January 2017; Page No. 61-62

प्राचीन भारत में राजत्व के सिद्धांत एवं अर्थशास्त्र की परम्परा

डॉ. दयाशंकर तिवारी
एशोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद पी.जी.कालेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

सप्तांग–राज्य के सात अंग का उल्लेख सर्वप्रथम अर्थशास्त्र में मिलता है, यद्यपि सरस्वती विलास नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि सप्तांग का उल्लेख गौतम ने भी किया था। परन्तु इस मत को स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि सरस्वती विलास बाद की रचना मानी जाती है। कालिकापुराण तथा कामन्दकीय नीतिसार में कहा गया है कि राज्य की सात प्रकृतियाँ होती हैं ऐसा बृहस्पति ने कहा है। इस प्रकार कौटिल्य ने पूर्ववर्तीय अर्थशास्त्र के विचारकों का अनुकरण करते हुए राज्य की सात प्रकृतियों का वर्णन किया है। कालिदास की रचनाओं से भी ज्ञात होता है कि स्वामी, अमात्य, जनपद, राष्ट्र, दुर्ग, कोष दण्ड एवं मित्र ये राज्य की सात प्रकृतियाँ है–

उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्वङ्गेषु यस्य में। विशाखदत्त ने भी मुद्राराक्षस नामक ग्रन्थ में राज्य की प्रकृतियों का उल्लेख किया है। राज्य के इन सात अंगों में महत्व की दृष्टि से राजा का स्थान सर्वोपरि है। डॉ0 हरिहरनाथ त्रिपाठी के अनुसार राज्य के सप्तांग सिद्धान्त के अन्तर्गत उसके विभिन्न अंगों के परस्पर सम्बन्ध उनका स्वतन्त्र स्थान, उनमें राजा का अंग के रूप में सर्वोच्च स्थान अभिव्यंजित होता है जिसका लक्ष्य व्यक्ति की सुरक्षा और सामाजिक विधि की स्थापना है। धर्मशास्त्र के अन्तर्गत राजा को अत्यधिक महत्व प्रदान प्रदान किया गया है। कौटिल्य ने भी राजा को राज्य कहा है। राजाराज्यमिति प्रकृति संक्षेपः। कामन्दकीय नीतिसार तथा स्मृतियों में इसी प्रकार का विचार मिलता है। कालिदास ने रघुवंश नामक ग्रन्थ में राजा के महत्व का उल्लेख किया है। विक्रमोवर्षीय नामक ग्रन्थ में राजा को कालस्य कारणम् कहा गया है। विशाखदत्त ने भी राज्य की प्रकृतियों में राजा को सर्वश्रेष्ठ माना है।

राजत्व का सिद्धान्त–प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में राजपद की उत्पत्ति के तीन सिद्धान्तों का उल्लेख मिलता है – दैवी, शक्ति एवं समझौते का सिद्धान्त। ब्राह्मण ग्रन्थों में इस बात का उल्लेख मिलता है कि राजा की नियुक्ति दैविक शक्तियों द्वारा होती है, ऋग्वेद में राजा त्रसद्दस्यु कहता है, ''देवगण वरूण की शक्ति पर निर्भर हैं, किन्तु मैं लोगों का राजा हूँ, मैं इन्द्र एवं वरूण हूँ, मैं विशाल एवं स्वर्ग तथा पृथ्वी हूँ, मैं अदिति का पुत्र हूँ। कौटिल्य भी गुप्तचरों द्वारा पौरों एवं जनपदों में राजा को इन्द्र एवं वरूण के समान दण्ड एवं कृपा देने वाला घोषित करने का आदेश देता है। इसी प्रकार के विचार महाभारत में भी मिलते हैं, शान्तिपर्व में कहा गया है कि अन्य देवता अलक्ष्य हैं, किन्तु राजा को हम देख सकते हैं। मनु का मत है कि ब्रह्मा ने इन्द्र मरूत, यम, सूर्य, अग्नि, वरूण, चन्द्र एवं कुबेर के प्रमुख अंशों से युक्त राजा की रचना की है। कालिदास ने भी राजा को दैवी अंशों से युक्त माना है। रघुवंश में वर्णन मिलता है कि रानी सुदक्षिणा के गर्भ में मानो लोकपाल प्रवेश करते हैं। कालिदास ने ऐसे राजाओं का उल्लेख किया है जिनके राज्य में इन्द्र वर्षा करता है, यम रोगों की उत्पत्ति को रोकता है, वरूण जलयान संचालन हेतु जलमार्ग को सुरक्षित करता है तथा कुबेर उनके कोर्श की वृद्धि करता है। इस प्रकार ये लोकपाल जिनकी शक्तियाँ राजा के जन्म के साथ प्राप्त हुई हैं उनकी सहायता करते हैं। तैतरीय ब्राह्मण में राजा के निर्माता को रत्निन् कहा गया है। अभिषेक की प्रक्रिया समाजसापेक्ष है, जिससे राजत्व में जनस्वीकृति का संकेत मिलता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में लोगों द्वारा वैवस्वत मनु को राजा बनाये जाने का उल्लेख मिलता है। यद्यपि कालिदास ने स्पष्ट रूप से प्रजाजनों के द्वारा राजा की नियुक्ति का उल्लेख नहीं किया है परन्तु कालिदास की रचनाओं में राजा के राज्याभिषेक तथा उसकी मृत्यु के उपरान्त उत्तराधिकारी की नियुक्ति के अवसर पर प्रजा तथा उसके प्रतिनिधियों की उपस्थिति का उल्लेख किया गया है–तैः कृत प्रकृतिमुख्य संग्रहैराशु। अभिज्ञानशाकुन्तल में लोकतन्त्र का शब्द का उल्लेख मिलता है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि कालिदास राजा की नियुक्ति में प्रजा की सहमति का समर्थन करते हैं। इसी प्रकार विशाखदत्त ने मुद्राराक्षस में प्रजा के समक्ष राजा के राज्याभिषेक का उल्लेख किया है– शिल्यिनः पौरांश्च गृहीतार्थानकृत्वा तस्मिन्नेष क्षणे पर्वतेश्वरभ्रातरं बैरोचकमेकासने चन्द्रगुप्तेन सहोपवेश्यकृतः पृथ्वीराज्यार्धभागः।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मात्स्यन्याय के सिद्धान्त का उल्लेख मिलता है। कौटिल्य का मत है कि मात्स्यन्याय से पीड़ित होकर लोग मनु को अपना राजा बनाते हैं। मनु का मत है कि जब सभी भयग्रस्त होकर इधर–उधर भागने लगे तब ब्रह्मा ने इस विश्व की रक्षा के लिए राजा का प्रणयन किया। मात्स्यन्याय का उल्लेख रामायण, शान्तिपर्व तथा कामन्दकीयनीतिसार में भी मिलता है। कालिदास ने रघुवंश नामक ग्रन्थ में राजा के अभाव में प्रजा की दुर्दशा का वर्णन किया है। अनाथदीनाः प्रकृतिरवेक्ष्य साकेतनाथं विधिवच्चकार। राजा दशरथ की मृत्यु एवं राम के वनगमन के उपरान्त अयोध्या की अनाथ प्रजा भरत की शरण में जाती है। विशाखदत्त ने भी राजा के न रहने पर प्रजा के कष्टों का उल्लेख किया है– स्वामिविरहात् सुशिथिलीकृतः प्रयत्नेषु। राजा के गुण–राजा के गुणों का उल्लेख धर्मग्रन्थों में मिलता है। ब्राह्मण ग्रन्थों में कहा गया है कि राजा को शक्तिशाली होना चाहिए परन्तु राजा के गुणों की विस्तृत सूची कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में दी है। इन गुणों को पी0वी0काणे ने तीन भागों में विभक्त किया है, जैसे कुलीनता, धर्मपरायणता, प्रफुल्लता, बड़ों के प्रति सम्मान भावना, सदाचारिता, सत्यवादिता, वचनवद्धता, कृतज्ञता, विशालचित्तता, उत्साह, सामन्तों को बस में रखने की क्षमता ये राजा के आभिगामिक गुण हैं, सीखने की आकांक्षा, अध्ययन एवं चिन्तन की प्रवृत्ति, धारण करने की सामर्थ्य, वाद–विवाद के उपरान्त निर्णय के प्रति श्रद्धा ये राजा के बुद्धि विषयक गुण हैं, इन गुणों का वर्णन करने के उपरान्त कौटिल्य ने राजा के आत्मसंपत्त गुणों का वर्णन किया है जैसे उचित वचन बोलने वाला, बुद्धि और बल से युक्त, समुचित दण्ड देने वाला, देशकाल और शक्तियों को ध्यान में

रखकर आचरण करने वाला।[1] याज्ञवल्क्य स्मृति में राजा के शक्तिशाली दयालु, संयमित मन एवं विचार वाला, सुख–दुःख में समान रहने वाला, अच्छे मातृ एवं पितृ कुल वाला, वचन एवं कर्म में मृदुल, अपने राज्य के दुर्बल स्थलों की रक्षा करने वाला, ब्राह्मणों के प्रति सहनशील, मित्रों के प्रति उदार, शत्रुओं के प्रति कठोर, अनुचरों तथा प्रजाजनों के प्रति पितृवत व्यवहार करने वाला आदि गुणों से युक्त बताया गया है। मनुस्मृति, शान्तिपर्व, कामन्दक, शुक्र आदि में भी राजा के इसी प्रकार के गुणों का वर्णन किया गया है।

संदर्भ

1. कौ0 6–1 स्वाम्यमात्य जनपद दुर्गकोश दण्ड मित्राणि प्रकृतयः याज्ञवल्क्य 1–353, मनु 9–294।
2. काणे, पी0वी0, खण्ड 3 पृ0 17, स्वाम्यमात्य सुहृददुर्ग कोश दण्डजनाः, गौम सूत्र (सरस्वती विलास द्वारा उद्धृत पृ0 45) यह परिभाषा वर्तमान गौतमसूत्र में नहीं मिलती है।
3. काणे, खण्ड 1 पृ0 413।
4. कालिकापुराण 87, 46–47, नीतिसार 8 : 4।
5. पंत, ए0डी0 अध्याय 5
6. रघु0 1:60, सीलेः इन्ट्रडक्सन टु पोलिटिकल साइन्स पृ0 19।
7. मुद्रा0 1:6, क्रूरग्रहः स केतुश्चन्द्रम सम्पूर्ण मण्डलमि दानीम्
8. डॉ0 हरिहरनाथ त्रिपाठी पृ0 123
9. ऋग्वेद तृतीय, 43, 5 आपस्तम्व धर्मसूत्र 11, 25, 11, गौतम 9, 48
10. कौ0 8:2, रामायण 1:12, महाभारत 12:68:40
11. कामन्दक 1:16, 4:1–2 मनु 9:296–297, शुक्रनीति 1:61–62
12. रघु0 1:24, 12:11
13. विक्रमोवर्शीय पृ0 93
14. मुद्रा0 अंक 2 पृ0 180 स्वामिविरहात् सुशिथिलीकृत प्रयत्नेषु–युष्मद्वलेषु
15. ऋग्वेद 4:42, अथर्ववेद 6:87:1–2, शतपथ ब्रा0 5%1%5%14 U.N. Ghosal: OP, CIT, Chapter II, P.V. Kane: OP. CIT, III pp 32.33, Dr. Beni Prasad: OP. CIT VIII, R.N. डमीजंए Pre-Buddhist India, 101.
16. को0 1:13
17. शान्तिपर्व 67:4, 69
18. मनु 7:7 सोडग्निर्भवति वायुश्च सोडर्क सोमः स धर्मराट्। सकुबेरः सवरूणः समहेन्द्रः प्रभावतः मनु 7/8, अग्नि पु0 226–17–20
19. रघु0 1:14, 1:28
20. रघु0 2:75, 3:11, 18:78
21. रघु0 17:18, श्री जे0एन0 फिगिस ने दैवी अधिकार के सिद्धान्त के लिए चार प्रमेय स्वीकृत किए हैं (दी डिवाइन राइटर आफ किंग्स) सन् 1934, पृ0 5–6।
22. तैतरीयब्राह्मर्ण 1:7:3
23. शतपथब्राह्मण 5:1:1:12–14, 5:2:1:25, के0पी0 जायसवाल हिन्दी पॉलिटी पृ0 200–5
24. कौ0 1:13, रामायण 267
25. रघु 19:55
26. शाकु0 पृ0 154
27. मुद्रा0 अंक पृ0 187
28. कौ0 1:13 मात्स्यन्यायाभिभूताः प्रजा मनुं वैवस्वतं राजानंचक्रिरे
29. मनु0 7:3, 7:14, शुक्रनीतिसार 7:71
30. रामायण 2:67, शांतिपर्व 15:30 एवं 67:16, कामन्दक 2:40 मत्स्यपुराण 225:9
31. रघु0 18:36
32. रघु0 12:12
33. मुदा0 अं0 क2 पृ0 180
34. A.B. VIII. 12
35. कौ0 6:1
36. पी0वी0 काणे धर्मशास्त्र का इतिहास भाग 2 पृ0 597

[1] पी0वी0 काणे धर्मशास्त्र का इतिहास भाग 2 पृ0 597